बहुपत्नीवाद

मौलाना वहीदुद्दीन खान

बहुपत्नीवाद

क़ुरआन में सामाजिक ज़िन्दगी के बारे में जो अहकाम और आदेश दिए गए हैं, उनमें से एक हुक्म वह है जो बहु पत्नीवाद (चार औरतों तक निकाह करने) के बारे में है. इस सिलसिले में आयत इन शब्दों में आई है:

> और अगर तुमको अन्देशा हो कि तुम यतीम बच्चों के मामले में इन्साफ़ न कर सकोगे तो (विधवा) औरतों में जो तुमको पसंद हों उनमें से दो-दो, तीन-तीन, चार-चार से निकाह कर लो. और अगर तुमको अन्देशा हो कि तुम इन्साफ़ न कर सकोगे तो एक ही निकाह करो.
>
> (सूर : अल-निसा 3)

यह आयत उहुद की लड़ाई (शव्वाल,3 हिजरी) के बाद उतरी. इस जंग में 70 मुसलमान शहीद हो गए थे. इसकी वजह से मदीने की बस्ती में अचानक 70 घर मर्दों से खाली हो गए. नतीजा यह हुआ कि वहां बहुत से बच्चे यतीम और बहुत-सी औरतें विधवा हो गईं. अब सवाल पैदा हुआ कि इस सामाजिक मसले को कैसे हल किया जाए उस वक़्त क़ुरआन में उपरोक्त आयत उतरी और कहा गया कि जो लोग ताक़त व सामर्थ्य रखते हों वे विधवा औरतों से निकाह करके यतीम बच्चों को अपनी सरपरस्ती में ले लें.

शब्दों और प्रासंगिकता के लिहाज़ से यह एक वक़्ती हुक्म नज़र आता है. यानी इसका ताल्लुक़ उस असाधारण स्थिति से है जबकि जंग के नतीजे में आबादी के अन्दर औरतों की तादाद ज़्यादा हो गई थी और मर्दों की तादाद कम. लेकिन क़ुरआन अपने नज़ूल (अवतरण) के लिहाज़ से ज़मानी (कालगत) होने के बावजूद अपने व्यापक और कुल अर्थों में एक शाश्वत किताब है. क़ुरआन की विशेषताओं का एक पहलू यह भी है कि वह ज़मानी (समयगत) ज़बान में अबदी और शाश्वत सच्चाई बयान करता है. उसका यह हुक्म भी उसकी इसी ख़ास ख़ूबी का परिवायक है

ज़्यादा शादियों का मामला सिर्फ़ मर्द की मर्ज़ी पर नहीं है. इसकी ज़रूरी शर्त (Inescapable Condition) यह है कि समाज मे ज़्यादा औरतें भी मौजूद हों. अगर ज़मीन पर 100 करोड़ इन्सान बसते हों और उनमें 50 करोड़ मर्द हों और 50 करोड़ औरतें तो ऐसी हालत में मर्दों के लिए मुमकिन ही न होगा कि वे एक से ज़्यादा शादियां करें.

ऐसी हालत में एक से ज़्यादा शादियां सिर्फ़ ज़बरदस्ती की जा सकती हैं. और जबरन की गई शादी इस्लाम में जायज़ नहीं. इस्लामी शरीअत में शादी के लिए औरत की रज़ामन्दी हर हाल में ज़रूरी शर्त है.

इस तरह अमली तौर पर देखिए तो क़ुरआन के उपरोक्त हुक्म का पालन सिर्फ़ उस सूरत में मुमकिन है जबकि समाज में वह ख़ास स्थिति पैदा हो जाए, जो उहुद की जंग के बाद मदीना में पैदा हो गई थी; यानी मर्दों और औरतों की तादाद में नाबराबरी अगर यह स्थिति न हो तो क़ुरआन का हुक्म व्यवहारतः लागू करने योग्य नहीं होगा. पर इन्सानी समाज और इन्सानी इतिहास का अध्ययन हमें बताता है कि मदीने की वह स्थिति महज़ वक़्ती स्थिति न थी, यह एक ऐसी स्थिति थी जो अक्सर हालात में ज़मीन पर मौजूद रहती है. मदीना जैसी संकटपूर्ण स्थिति हमारी दुनिया में आम तौर पर मौजूद रहती है. क़ुरान के रचयिता के परोक्ष-ज्ञान का यह सबूत है कि उसने अपनी किताब में एक ऐसा हुक्म दिया, जो प्रत्यक्षतः एक हंगामी (संकटकालीन) हुक्म था, पर वह हमारी दुनिया के लिए एक अबदी और शाश्वत हुक्म बन गया.

असमान अनुपात

आंकड़े बताते हैं कि जन्म के लिहाज़ से औरत और मर्द की तादाद लगभग बराबर होती है. यानी जितने बच्चे लगभग उतनी ही बच्चियां, पर मृत्यु-दर (Mortality) के आंकड़ों से मालूम होता है कि औरतों की तुलना में मर्दों की मृत्यु की दर ज़्यादा है. यह फ़र्क़ बचपन से लेकर आख़िरी उम्र तक जारी रहता है. इन्सायक्लोपीडिया ब्रिटेनिका (1984) के अनुसार, आमतौर पर मौत का ख़तरा उम्र के हर चरण में औरतों के लिए कम पाया गया है और मर्दों के लिए ज़्यादा.

In general the risk of death at any given age is less for females than the males. (VII/37)

आमतौर पर समाज में औरतों की तादाद ज़्यादा होने और मर्दों की तादाद कम होने के कई कारण होते हैं. मसलन जब जंग होती है तो उसमें ज़्यादातर सिर्फ़ मर्द मारे जाते हैं. पहले विश्व-युद्ध (1914-18) में अस्सी लाख से ज़्यादा फ़ौजी मारे गए थे. शहरी लोग, जो इस जंग में मारे गए, उनकी संख्या अलग है. ये भी ज़्यादातर मर्द थे. दूसरे विश्वयुद्ध (1939-45) में साढ़े छः करोड़ आदमी मारे गए या शारीरिक रूप से बेकार हो गए. ये सारे लोग ज़्यादातर मर्द थे. ईराक-ईरान जंग (1979-1988) में ईरान की बयासी हज़ार औरतें विधवा हो गईं. ईराक में ऐसी औरतों की तादाद लगभग एक लाख है जिनके पति दस साल चलने वाली इस जंग में मारे गए.

इसी तरह, मिसाल के तौर पर जेल और कैद की वजह से भी समाज में मर्दों की तादाद कम और औरतों की तादाद ज़्यादा हो जाती है. अमरीका को आज दुनिया की सबसे सभ्य सोसायटी माना जाता है आंकड़े बताते हैं कि अमरीका में लगभग तेरह लाख आदमी किसी-न-किसी जुर्म में पकड़े जाते हैं. उनमें से एक बड़ी संख्या लम्बे समय तक के लिए जेल में डाल दी जाती है. इन सज़ा याफ्ता क़ैदियों में दोबारा 97 प्रतिशत मर्द ही होते हैं. (E.B.-14/1102)

इसी तरह आधुनिक औद्योगिक व्यवस्थाओं ने दुर्घटनाओं को बहुत बढ़ा दिया है. आज के दौर में दुर्घटनाओं से होने वाली मौतें रोज़मर्रा के जीवन का अंग बन गई हैं. सड़क-दुर्घटनाएं, विमान-दुर्घटनाएं, रेल-दुर्घटनाएं, कारख़ानों की दुर्घटनाएं तथा अन्य मशीनी दुर्घटनाएं हर देश में और हर रोज़ होती रहती हैं. नए औद्योगिक दौर में ये दुर्घटनाएं इतनी ज़्यादा बढ़ गई हैं कि सेफ़्टी इंजीनियरिंग (Safty Engineering) के नाम से बाक़ायदा एक नया विषय निकल आया है. 1967 के आंकड़ों के अनुसार, इस एक साल में पचास देशों के अन्दर कुल मिलाकर 175,000 मौतें दुर्घटनाओं से हुईं (E.B.-16/137) यह ज़्यादातर मर्द थे.

औद्योगिक दुर्घटनाओं की मौतों में सेफ्टी इंजीनियरिंग के बावजूद पहले से भी ज़्यादा इज़ाफा हुआ है. मिसाल के तौर पर विमान-दुर्घटनाएं जितनी 1988 में हुईं उतनी पहले कभी नहीं हुईं थीं. इसी तरह तमाम औद्योगिक देशों में लगातार युद्ध-हथियारों के प्रयोग हो रहे हैं. उनमें बराबर लोग मरते रहते हैं. इन प्रयोगों से मरने वालों की तादाद कभी नहीं बताई जाती, फिर भी यह निश्चित है कि इनमें भी पूर्णतः मर्द ही होते हैं जो बेमौत मारे जाते हैं.

इस तरह के अनेक कारणों से हालत यह पैदा हो जाती है कि औरतों की तादाद अपेक्षाकृत ज़्यादा हो जाती है और मर्दों की संख्या अपेक्षाकृत कम! अमरीका की सोसायटी बेहद प्रगतिशील सोसायटी समझी जाती है, पर वहां भी यह फर्क पूरी तरह से पाया जाता है 1987 के आंकड़ों के अनुसार अमरीका की आबादी में मर्दों की तुलना में लगभग 71 लाख (7.8 Million) महिलाएं ज्यादा थीं. इसका मतलब यह है कि अगर अमरीका का हर मर्द शादीशुदा हो जाय तो इसके बाद भी अमरीका में लगभग 71 लाख औरतें ऐसी बचती हैं जिनके लिए मुल्क में ग़ैर शादी-शुदा मर्द मौजूद न होंगे, जिनसे वे विवाह कर सकें.

दुनिया की आबादी में मर्दों और औरतों की तादाद के फर्क़ को बताने के लिए यहां कुछ पश्चिमी देशों के आंकड़े दिए जा रहे हैं. ये आंकड़े इन्सायक्लोपीडिया ब्रिटैनिका से लिये गये हैं:—

देश	मर्द	औरत
1. आस्ट्रिया	47.07%	52.93%
2. बर्मा	48.81	51.19
3. जर्मनी	48.02	51.89
4. फ्रांस	48.99	51.01
5. इटली	48.89	51.11
6. पोलैंड	48.61	51.39
7. स्पेन	48.94	51.06
8. स्विट्जरलैंड	48.67	51.33

9. सोवियत यूनियन	46.59	53.03
10. अमेरिका	48.58	51.42

औरत की मर्ज़ी

एक से ज्यादा शादियों के लिए सिर्फ़ यही काफ़ी नहीं है कि आबादी के अन्दर औरतें ज़्यादा तादाद में मौजूद हों. इसी के साथ यह भी निश्चित रूप से ज़रूरी है कि जिसऔरत से शादी या निकाह करना है, वह ख़ुद भी स्वतंत्र रूप से इस क़िस्म के निकाह के लिए पूरी तरह राज़ी हो.इस्लाम में औरत की मर्ज़ी होना एक निश्चित और ज़रूरी शर्त है. किसी औरत से ज़बर्दस्ती शादी करना ज़ायज़ नहीं. इस्लाम के प्रामाणिक इतिहास में कोई एक भी ऐसी मिसाल नहीं है, जब किसी मर्द को यह इज़ाज़त दी गई हो कि वह किसी औरत को ज़बर्दस्ती अपने निकाह में ले आये.

हदीस में आया है कि कुंआरी औरत का निकाह न किया जाए, जब तक उसकी इज़ाज़त न ले ली जाए. हज़रह अब्दुल्लाह बिन अब्बास कहते हैं कि एक लड़की रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास आई और कहा कि उसके बाप ने उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ उसका निकाह कर दिया है. आपने उसको इख़्तियार (अधिकार) दिया कि वह चाहे तो निकाह को बाक़ी रखे और चाहे तो उसको तोड़ दे. (अबू दाऊद)

> हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास कहते हैं कि बरेरा (नामक लड़की) का पति एक काला ग़ुलाम था. उसका नाम मुग़ीस था. मैंने देखा कि वह मदीने के रास्तों में बरेरा के पीछे चल रहा है. और उसके आंसू उसकी दाढ़ी तक बह रहे हैं. रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अब्बास से कहा कि अब्बास क्या तुमको बरैरा के साथ मुग़ीस की मुहब्बत और मुग़ीस के साथ बरैरा की नफ़रत पर ताज्जुब नहीं.फिर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बरैरा से कहा कि काश, तुम उसकी तरफ ध्यान (रजूअ) कर लो.

बरैरा ने कहा कि क्या आप मुझको इसका हुक्म देते हैं? आपने फरमाया कि सिर्फ़ सिफ़ारिश कर रहा हूं. बरैरा ने कहा: मुझे इसकी (सिफारिश की) ज़रूरत नहीं.

बुखारी

बहुपत्नीत्व की एक घटना वह है जो हज़रत उमर फारूक़ की ख़िलाफ़त (शासनकाल) के ज़माने में घटी एक विधवा महिला उम्मे अबान बिन अतवा को चार मुसलमानों की तरफ से शादी का पैग़ाम (प्रस्ताव) मिला, जो सब के सब शादीशुदा थे. इन चार लोगों के नाम यह हैं– उमर बिन ख़त्ताब, अ़ली बिन अबी तालिब, जुबैर और तलहा. उम्मे अबान ने तलहा का पैग़ाम क़बूल कर लिया और बाक़ी तीनों के लिए इंकार कर दिया. इसके बाद उम्मे अबान का निकाह तलहा से कर दिया गया.

यह वाक़्या मदीना (इस्लामी राजधानी) में हुआ. जिन लोगों के पैग़ाम को रद्द किया गया, उनमें उस वक़्त के अमीरुल मोमिनीन (इस्लामी शासक) का नाम भी शामिल था पर इस पर किसी को ताज्जुब और परेशानी नहीं हुई और न इसकी वजह से कोई आक्रोश और अशांति पैदा हुई. इसकी वजह यह थी कि इस्लाम में औरत को अपने बारे में फैसला करने की पूरी आज़ादी है. यह औरत का एक ऐसा हक़ है, जिसको कोई भी उससे छीन नहीं सकता, यहां तक कि वक़्त का बादशाह भी नहीं.

इन अहकाम और वाक़्यात से साबित होता है कि इस्लाम में चार की हद तक निकाह करने की इजाज़त का मतलब यह नहीं है कि कोई मर्द चार औरतों को पकड़ कर अपने घर में बन्द कर ले. यह दो तरफा रज़ामन्दी और दोतरफ़ा राज़ी खुशी का मामला है. वही औरत किसी शादी-शुदा मर्द के निकाह में लाई जा सकती है, जो ख़ुद उसकी दूसरी या तीसरी बीवी बनने पर बेहिचक राज़ी हो. और जब यह मामला पूरी तरह औरत की राज़ी खुशी से होता है तो इस पर किसी को एतराज़ करने का क्या हक है? मौजूदा जमाने में चुनने की स्वतंत्रता (Freedom of choice) को बहुत ज़्यादा अहमियत दी जाती है.

इस्लामी कानून में यह आज़ादी पूरी तरह मौजूद है. हालांकि औरत को बराबरी का दर्जा देने का दम भरने वाले लोग 'चुनने की आज़ादी' को 'चुनने की पाबंदी' के बराबर बना देना चाहते हैं.

मसले का हल न कि हुक्म

उपरोक्त बहस से यह बात साबित हो जाती है कि औरत और मर्द की तादाद में नाबराबरी हमारी दुनिया का एक स्थायी और मुस्तक़िल मसला है. वह जंग की हालत में भी पाया जाता है और जंग न होने की हालत में भी. अब सवाल यह है कि जब औरत-मर्द की तादाद में नाबराबरी है तो इस नाबराबरी के मसले को किस तरह हल किया जाय. एक पत्नी के उसूल पर अमल करने के नतीजे में जिन विधवा या ग़ैर-विधवा औरतों को पति न मिले, वे अपने प्राकृतिक तक़ाज़े पूरे करने के लिए क्या करें? वे समाज में किस तरह एक सम्मान पूर्ण और बाइज़्ज़त जिन्दगी हासिल करें?

एक तरीक़ा तो वह है जो भारत की प्राचीन परम्पराओं में है— कि ऐसी विधवा औरतें अपने आप को जला कर अपने वजूद को ही खत्म कर लें. ताकि न उनका वजूद रहे और न उनकी कोई समस्या या फिर ऐसी औरतें घर से महरूम और वंचित होकर सड़कों की बेकस ज़िन्दगी गुज़ारने पर राज़ी हो जाएं. इस उसूल पर अमल करने से हिन्दू-समाज का क्या हाल हुआ है, इसकी विस्तृत जानकारी चाहिए हो तो 'इंडिया टुडे' (15 नवम्बर 1987) की आठ पृष्ठों की सचित्र रिपोर्ट देखिए जो इस सार्थक शीर्षक के साथ प्रकाशित हुई है:

Widows: wreaks of Humanity.
(विधवाएं: इन्सानियत का बरबाद मलबा)

इस हल के बारे में ज़्यादा कुछ लिखने की ज़रूरत नहीं, क्योंकि मुझे यह उम्मीद नहीं कि मौजूदा ज़माने में कोई होशमन्द और विवेकशील आदमी इस तरीक़े की वकालत कर सकता है या किसी भी हद तक वह इसको विधवा-समस्या का हल समझ सकता है.

दूसरा वह तरीक़ा है जो पश्चिमी देशों की 'सभ्य सोसाइटी' में प्रचलित है. यानि किसी एक मर्द की दूसरी विवाहिता बनने पर राज़ी न होना, बल्कि बहुत से मर्दों की अविवाहिता बीवी बन जाना.

दूसरे विश्व-युद्ध में यूरोप के कई देश लड़ाई में शामिल थे. जैसे जर्मनी, फ्रांस, इंग्लैंड वग़ैरा. इस जंग में इन देशों के मर्द बहुत बड़ी तादाद में मारे गए. लिहाजा जंग के बाद मर्दों के मुक़ाबले में औरतों की तादाद बहुत ज़्यादा हो गई. इसका नतीजा यह हुआ कि इन देशों में स्वतंत्र यौनाचार (खुला सैक्स) आम हो गया. यहां तक कि बहुत सी बिना पति वाली औरतों के घरों के सामने इस क़िस्म के बोर्ड लिखे हुए नज़र आने लगे:

Wanted an evening guest.
(रात गुज़ारने के लिए एक मेहमान चाहिए.)

यह स्थिति पश्चिम में जंग के बाद भी विभिन्न रूपों में बदस्तूर बाक़ी है. अब इसको बाक़ी रखने का कारण ज़्यादातर औद्योगिक और मशीनी दुर्घटनाएं हैं जिसका ज़िक्र ऊपर किया गया है.

ग़ैर क़ानूनी बहुपत्नीवाद

जिन कौमों में बहुपत्नीवाद को नापसंद किया जाता है, उनको इसकी यह क़ीमत देनी पड़ी कि उनके यहां इससे भी ज़्यादा नापसंदीदा एक चीज़ पैदा हो गई, जिसको मिस्ट्रेस (Mistress) कहा जाता है. इन कौमों के लिए यह मुमकिन न था कि वे उन स्वाभाविक वजहों को रोक सकें, जिनके नतीजे में अक्सर समाज में औरतों की तादाद ज़्यादा और मर्दों की तादाद कम हो जाती है. एक तरफ आबादी के अनुपात में यह फ़र्क़ और दूसरी तरफ़ बहुपत्नीवाद में पाबन्दी. इस दोतरफा मसले ने उनके यहां मिस्ट्रेस की बुराई पैदा कर दी, जिसे दूसरे शब्दों में ग़ैर क़ानूनी बहुपत्नीवाद कहा जा सकता है.

मिस्ट्रैस की परिभाषा 'बेवस्टर्ज़ डिक्शनरी' (Webster's Dictionary) में यह दी गई है कि वह औरत जो किसी मर्द के साथ,

उससे शादी किए बिना कम या ज़्यादा लम्बे अर्से तक सैक्स-सम्बन्ध क़ायम रखे.

मिस्ट्रैस का यह तरीक़ा भारत सहित उन तमाम देशों में प्रचलित है जहां बहुपत्नीवाद पर क़ानूनी पाबंदी है या सामाजिक तौर पर इसको बुरा समझा जाता है. ऐसी स्थिति में असली सवाल यह नहीं है कि बहुपत्नीवाद को अपनाया जाय या नहीं. असली सवाल यह है कि आबादी में औरतों की ज़्यादा (गैर अनुपाती) तादाद को खपाने के लिए कानूनी बहुपत्नीवाद का तरीक़ा अपनाया जाय या गैर क़ानूनी बहुपत्नीवाद का.

इस्लामी तरीक़ा

इसके बाद वह तरीक़ा है जो इस्लामी शरीअत में इस मसले के हल के लिए बताया गया है यानि कुछ ख़ास शर्तों के साथ कुछ मर्दों के लिए एक से ज़्यादा निकाह की इजाज़त. बहुपत्नीवाद का यह उसूल जो इस्लामी शरीअत में रखा गया है, वह दरअसल औरतों को उन भयानक नतीजों से बचाने के लिए है जो ऊपर बताए गए हैं.

हालांकि यह ज़ाहिर रूप से एक आम हुक्म है, लेकिन अगर इस हक़ीकत को सामने रखिए कि अमली तौर पर कोई औरत किसी दूसरे मर्द की दूसरी या तीसरी बीवी बनने पर विशिष्ट और संकट की हालत में ही राजी हो सकती है, न कि आम हालात में तो यह बात साफ हो जाती है कि यह हुक्म दरअसल एक सामाजिक मसले के हल के तौर पर दिया गया है. यह अतिरिक्त और फ़ाज़िल औरतों को सैक्स सम्बन्धी भड़काव से बचा कर उपयुक्त, माक़ूल और स्थिर पारिवारिक ज़िन्दगी गुजारने का एक इन्तज़ाम है. दूसरे शब्दों में यह एक-पत्नीवाद के मुक़ाबले में बहुपत्नीवाद को अपनाने का मसला नहीं है, बल्कि बहुपत्नीवाद और सैक्स-सम्बन्धी बरबादी में से एक को चुनने का मसला है.

बहुपत्नीवाद के हुक्म को अगर सरसरी तौरपर देखा जाय तो यह एक ऐसा हुक्म मालूम होगा जो मर्दों के हित में बनाया गया हो. लेकिन

अगर इस को सामाजिक व्यावहारिकता की नज़र से देखें तो यह ख़ुद औरतों के हित में है औरतों के मसले का यह एक ज़्यादा माक़ूल और स्वाभाविक बन्दोबस्त (Arrangement) है, इसके अलावा और कुछ नहीं.

इस्लाम में एक से ज़्यादा पत्नियों की इजाज़त मर्दों की काम-वासना (सैक्स) को पूरा करने के लिए नहीं है. यह दरअसल एक मसले को हल करने का व्यावहारिक उपाय है. मर्दों के लिए एक से ज़्यादा शादियां करना उसी वक़्त मुमकिन होगा जबकि मर्दों की अपेक्षा औरतें ज़्यादा तादाद में पाई जा रही हों. अगर औरतों की तादाद अपेक्षाकृत ज़्यादा न हो तो इस हुक्म पर अमल करना सिरे से नामुमकिन होगा. फिर क्या इस्लाम मर्दों की ख़्वाहिश (वासना) पूरी करने के लिए एक ऐसा उसूल बना सकता है जिस पर अमल करना या जिससे कुछ हासिल करना नामुमकिन हो?

इन्सायक्लोपीडिया ब्रिटैनिका (1984) ने बिल्कुल ठीक लिखा है कि एक से ज़्यादा पत्नियों के उसूल को अपनाने की एक वजह आबादी में औरतों का अनुपात ज़्यादा होना (Surplus of Women) है. यही वजह है कि जो क़ौमें बहुपत्नीवाद की इज़ाज़त देती हैं या उसको पसन्द करती हैं, उनमें भी मर्दों की बहुत बड़ी तादाद औरतों की सीमित संख्या होने से एक ही पत्नी पर गुज़ारा करती है.

> Among most people who permit or prefer it, the large majority of men live in Monogamy because of the limited number of women (VIII/97).

इस्लाम में एक से ज़्यादा बीवियां रखने की इजाज़त आदर्श के तौर पर नहीं है. यह दरअसल एक व्यावहारिक ज़रूरत (Practical reason) की वजह से है, और वह यह कि अक्सर ऐसा होता है कि आबादी में मर्दों की तुलना में औरतों की तादाद ज़्यादा हो जाती है. इस ज़्यादा या अतिरिक्त तादाद के सम्मानपूर्ण व बाइज़्ज़त हल के लिए बहुपत्नीवाद का उसूल रखा गया है. यह एक व्यावहारिक व अमली हल है न कि कोई वैचारिक आदर्श!

उपसंहार

ऊपर जो बहस की गई है उसका ख़ुलासा यह है कि पैदायश के लिहाज़ से हालांकि मर्द और औरत बराबर तादाद में पैदा होते हैं, पर बाद में कई कारणों से ऐसा होता है कि समाज में मर्दों की तादाद कम हो जाती है और औरतों की तादाद ज़्यादा. सवाल यह है कि इस मसले का हल क्या हो? इस मजबूरी की हालत में जिन्सों (औरत-मर्द) के बीच स्वस्थ्य और सेहतमन्द ताल्लुक़ किस तरह क़ायम किया जाए?

एकपत्नीवाद (यानी एक मर्द, एक औरत) के उसूल पर अमल करने की हालत में लाखों की तादाद में ऐसी औरतें बाक़ी रहती हैं, जिनके लिए समाज में ऐसे मर्द मौजूद न हों. जिनसे वे शादी करके इज़्ज़त के साथ ज़िन्दगी गुज़ार सकें. एक पत्नी का उसूल किसी को ज़ाहिरी तौर पर अच्छा नज़र आ सकता है, पर वाक़्यात बताते हैं कि मौजूदा दुनिया में उस पर पूरी तरह अमल नहीं किया जा सकता. तो नतीजा यह निकलता है कि हमें अपना चुनाव (choice) 'एक पत्नी' और 'कई पत्नियां' के बीच नहीं करना, बल्कि बहुपत्नीवाद ही की एक क़िस्म और दूसरी क़िस्म के बीच करना है.

अब एक सूरत यह है कि ये अतिरिक्त (फ़ाजिल, एक्स्ट्रा) औरतें सेक्स के लिए भटकने या सामाजिक बरबादी के लिए छोड़ दी जाएं. दूसरी सूरत यह है कि वे अपनी मर्ज़ी से ऐसे मर्दों के साथ वैवाहिक रिश्ते में बंध जाएं, जो एक से ज़्यादा बीवियों के साथ इन्साफ़ व न्याय कर सकते हों.

इन दो मुमकिन सूरतों (विकल्पों) में से इस्लाम ने दूसरी सूरत को चुना है और ग़ैर-इस्लाम ने पहली को. अब हर शख़्स ख़ुद फ़ैसला कर सकता है कि दोनों से कौन-सा तरीक़ा ज़्यादा सम्मानपूर्ण, ज़्यादा बाइज़्ज़त और ज़्यादा माक़ूल है.